देवाधिदेव श्री मुनिसुव्रत स्वामिने नमः ।

शासन सम्राट् आचार्य देव श्रीमद् विजय नेमिसूरीश्वर सद् गुरुभ्यो नमः



सिंहल की राजकन्या

सुदर्शना



लेखक :

आचार्य विजय विशाल सेन सूरि

"विराट"

विराट प्रकाशन
२६ वां

प्रकाशक :
विराट प्रकाशन मंदिर
श्री अमृत सूरिजी ज्ञान मंदिर
बंबई–६६.

सुदर्शना

तृतीय आवृति : एक हजार

वीर संवत्	विक्रम संवत्	नेमि संवत्	सन्
२५०६	२०३६	३१	१९८०



मूल्य :
चिन्तन एवं मनन

प्राप्ति स्थान :

☐ आर. डी. शाह
रमण स्मृति
वी. पी. रोड, बंबई–४

☐ हीराचंद वैद
जोरावर भवन
जौहरी बाजार, जयपुर–३

☐ विशाल जैन कला संस्थान
तलहटी रोड, केसरियाजी नगर
पालीताना

☐ प्रभात ड्रायफ्रूट स्टोर
जैन मंदिर के सामने,
प्रार्थना समाज, बंबई–४



जैनाचार्य विजय विशालसेन सूरीश्वरजी म.
"विराट"

प्रास्ताविक

जितनी अद्भुत उतनी ही सच्ची, एक चील की कहानी। निराला नग्मा! दर्दीली दास्तान!

भृगुकच्छ और अश्वाववोध!
घोड़ा और भगवान्!
चील और साधु-महात्मा!

सिंहल की राजकुमारी और शकुनिका विहार!!!

गह सब काफी कुछ विलक्षण होते हुए भी अपने गहरे अस्तित्व और बुलंद हकीकतों को सम्हालकर बैठा एक बेनमून नजराना है तवारीख की आलम को!!

विविध-अचरज भरे रंगों से रंगे राजकुमारी सुदर्शना के जीवन कथन को अपनी जिंदा कलम से सजीवन कर भारतवर्ष के महान् ज्योतिर्धर जैनाचार्य श्रीमद् विजय देवेन्द्रसूरीश्वरजी महाराज साहब ने आत्मा की दुनिया में कमाल का कलाम दिया। न केवल जैनों की जिंदादिली व कुछ अच्छा करगुजरने की तमन्ना वाली आत्मा की झलकी ही बताई वरन भारत की जनता पर भारी उपकार भी किया है।

अपनी संस्कारिता, कला प्रियता एवं वैभव की विपुलता को लेकर लाटदेश प्रसिद्ध तो था ही प्रकृति ने भी उदारता से अपना सौंदर्य यहां बिखेरा था।

लाटदेश के शिल्पियों की मनोमुग्ध शिल्पकला एवं जैनाचार्यों की सर्वतोमुखी प्रतिभा देश की सीमाओं को लांघ चुकी थी ।

नर्मदा नदी के किनारे—समंदर के साहिल से छूते इस प्रदेश में अनेक धर्मिष्ठ दक्ष और प्रतापी महाराजा हो गये हैं जिन्होंने धर्म के माहात्म्य को पनपाया बढाया ।

यहां मौर्य, क्षत्रिय, गुप्त, गुर्जर, परमार, चौलूक्य, सोलंकी, वाघेला आदि ने एवं अंत में मुसलमान बादशाहों ने शासन किया ।

लाटदेश के पाटनगर का नाम भृगुकच्छ था । आज वह भरूच या भड़ौच के नाम से प्रसिद्ध है ।

यहां के बाजारों में जल-स्थल मार्ग से आये पदार्थों के ढेर लग जाते । व्यापार-व्यवसाय से यह बंदरगाह सदा दमकता रहता । यहां बड़े-बड़े शाह सौदागर बसते थे । यह वही नगर है जहां श्रीपाल महाराजा की धवल सेठ से पहली मुलाकात हुई थी ।

श्री मुनिसुव्रत परमात्मा ने यहां एक घोड़े को उपदेश दिया था । घोड़ा अनशनपूर्वक मृत्यु पाया और देव हुआ । इस देव ने आकर श्री मुनिसुव्रत प्रभु की भक्ति की और प्रभु की महिमा का विस्तार किया । तब से यहां अश्वावबोध तीर्थ की उत्पत्ति हुई ।

भरूच के वनखंड में बरगद के पेड़ पर एक चील रहती थी । अपने बहुत छोटे दो बच्चों को अपने घोंसले में छोड़ वह खुराक की तलाश में उड़ी । वापस आरही थी कि एक म्लेच्छ ने उसे बाण मारा, वह धरती पर आ गिरी ।

बच्चे मां की राह देखते बैठे थे और चील गंभीर रूप से घायल थी । काफी कोशिश करने पर भी वह उड़-चल न सकी । लाचार हो

वह तन-मन की पीड़ा में पिसी जा रही थी, मौत अब ज्यादा दूर नहीं थी ....ऐसे वक्त में........।

भाग्योदय से यात्रा निमित्त दो साधु महाराज वहां से गुजरे। उन्होंने चील को धैर्य दे धर्म व नवकार सुनाये। उसके प्रताप से गंदी चील मरकर सिंहलद्वीप (लंका) के महाराजा की प्यारी पुत्री हुई। नाम रखा गया राजकुमारी सुदर्शना।

एक शाह सौदागर के मुख से 'नमो अरिहंताणं' पद सुन कर उसे जाति—पूर्वभव का ज्ञान हुआ। गत भव के सारे दुःख स्मृति में ताजा हो उभर आये और वह संसार से विरक्त हो गयी। भरूच जाकर उपकारी गुरुओं एवं तीर्थंकर परमात्मा की भक्ति में जीवन बिताने का उसने फैसला कर लिया।

माता-पिता की अनुमति पूर्वक अति समृद्धि ले वह भरूच आई। अश्वाववोध के स्थान पर गुरु महाराज ज्ञानभानुजी महाराज के उपदेश से उसने अति भव्य मुनिसुव्रत भगवान का महा जिनालय बनवाया और अपनी पूर्वभव की घटना की स्मृति में 'शकुनिका (चील) विहार' ऐसा उसका नाम रखा।

भृगुकच्छ नगर की महत्ता का वर्णन जैन ग्रंथों के अलावा बौद्ध एवं ब्राह्मण ग्रंथों में भी काफी तादाद में मिलता है। नर्मदा के चौड़े किनारेवाले, व्यापारिक एवं सामरिक दोनों दृष्टि से महत्वपूर्ण यह नगर एश्वर्यपूर्ण तो था ही, साथ साथ प्राकृतिक एवं धार्मिक दृष्टि से भी इसका अजय गजब का आकर्षण था।

अश्वाववोध शकुनिका विहार के कारण यह नगर आदर और आकर्षण का स्थल बना था। इस तीर्थ पर कब्जा करने की अभिलाषा से विधर्मियों की ललचाई आंखें यहां सदा बिछी रहती थीं।

(जिस तरह आज भी एकलिंगजी, चित्तौड़गढ़, बाँसवाड़ा, पुष्करजी का ब्रह्माजी वाला मंदिर आदि अनेक जिन मन्दिरों में अजैन प्रतिमाएं स्थापित हो गयीं-कितनीक जगह (दक्षिण में) जैन मूर्तियों के स्वरूप को बदला गया है)

अजैन लोग इस तीर्थ को हथियाने की कोशिश में रहते। परिणामतः इस नगर पर एकाधिकार प्राप्त करने के लिये जैन, बौद्ध और सनातनियों का आपस में घर्षण होता रहता।

और आखिर एक बार इस तीर्थ पर कब्जा और नगर पर वर्चस्व जमाने में बौद्ध सफल हो ही गये।

लेकिन इस दुहरे हमले का जैनों ने बहादुरी चतुराई और अपनी शान के मुताबिक मुकम्मिल मुकाबला किया। अपनी हस्ती को सम्हाला और किसी की भी मैली मुराद को बर न आने दिया।

संसार में करीब हर चीज की चढ़ती पड़ती होती आई है। देवों फरिश्तों को भी मुग्ध करनेवाला शकुनिका विहार कई दफा जीर्णशीर्ण हुआ। अनेक बार जीर्णोद्धार और प्रतिष्ठा हुई।

जितना यह तीर्थ भव्य था उतना ही भरूच समृद्ध था। "टूटा तो भी टोडा" राजस्थान की इस उक्ति की तरह भरूच के लिए भी है 'भांग्यु तो य भरूच' यह उक्ति गुजरात में आम तौर पर प्रसिद्ध है।

श्री गौतमस्वामी ने 'जगचिंतामणि चैत्यवंदन' में 'भरुअच्छहिं मुणिसुव्व' भृगुकच्छ में मुनिसुव्रत प्रभु को वंदन कर शकुनिका विहार की ही महिमा गायी है, क्योंकि तीर्थ की भव्यता, दिव्यता, रमणीयता या अतिशयशालिता को लेकर ही नगरों की महत्ता मानी जाती है।

सुवर्ण युग में आर्य सुहस्तीगिरिजी के उपदेश से सम्राट् संप्रति ने तथा आचार्य सिद्धसेन दिवाकर सूरिजी के उपदेश से महाराजा विक्रमादित्य ने जीर्णोद्धार करवाया था लेकिन उसके बाद बौद्ध लोग इस पर अधिकार पाने में सफल होगये थे। लेकिन महाराजा बलमित्र के शासनकाल (वीर सं. ४८४) में आर्य खपुटाचार्यजी ने इसे बौद्धों के पास से पुनः जैन संघ को दिलवाया था।

आंध्र के महाराजा सातवाहन ने भी इसका जीर्णोद्धार कराया था। श्री पादलिप्त सूरिजी ने देवकुलिका सहित मुख्य जिनालय पर ध्वजदंड की प्रतिष्ठा कराई थी।

एक बार तो आग के भीषण उपद्रव से सारा तीर्थ भस्मसात् हो गया था। उसका पुनरुद्धार श्री विजयसिंह सूरीश्वरजी नाम के आचार्य देव ने नगरवासियों को उपदेश देकर करवाया था। श्री प्रभावक चरित्र में यह उल्लेख है।

समुद्री तूफान और उसकी खारी हवा से भी इस स्थापत्य को हानि पहुंचती रही। किसी भी तरह इस दुर्लभ ऐतिहासिक अमूल्य तीर्थ की हिफाजत के लिए आचार्य महाराजाओं एवं श्री संघों ने कोई कसर नहीं रखी थी। फिर भी............

वीर संवत् ८८४ में बौद्धों ने शकुनिका विहार तीर्थ, अनेक दूसरे महान् जिनालय और भृगुकच्छ के महान् ग्रंथालय आदि पर अपना अधिकार जमा लिया था। उनका उस सारे प्रदेश पर प्रभाव फैल चुका था।

'जो हारेगा वह अपने सारे शिष्यवृंद सहित लाटदेश से बाहिर चला जायगा।' ऐसी शर्त के साथ राज्यसभा में आचार्य मल्लवादी सूरिजी ने बौद्धों के साथ शास्त्रार्थ किया और बौद्धों को पराजित कर उन्हें उस सारे भूभाग से चले जाने के लिए बाध्य किया। यों पुनः जैनों को अपने तीर्थ पर अधिकार मिला।

विक्रम सं. ११९३ श्री चन्द्रसूरिजी द्वारा रचित श्री मुनिसुव्रत स्वामीजी के मागधी चरित्र में उल्लेख है कि 'संतुसेठ नाम के धनाढ्य श्रावक ने शकुनिका विहार पर सुवर्ण के कलश चढाये थे।'

गुजरात के महामात्य मरणशय्या पर थे तब उन्होंने अपने पुत्रों को अपनी अंतिम इच्छा प्रकट करते कहा था कि–

'श्री शत्रुंजय एवं शकुनिका विहार के जीर्णोद्धार की प्रबल भावना थी। मैं समर्थ होते हुए भी कल के भरोसे चुक गया। अब तो जाने की तैयारी है।'

उनके बड़े पुत्र वाग्भट ने कहा 'पिताजी! आप चिंता न करें शत्रुंजय का उद्धार मैं कराऊंगा।'

'और मैं शकुनिका विहार का।' छोटे पुत्र अंबड ने कहा।

अंबड ने अतिदुर्जय कोंकण नरेश मल्लिकार्जुन को हराकर गुर्जरपति कुमारपाल भूपाल से 'राजपितामह' का विरुद प्राप्त किया। उन्होंने १२२१ में शकुनिका विहार का बुनियाद पाये में से पाषाण का करवाया जो दृढ़, कलात्मक और अति भव्य था। इस जीर्णोद्धार में अंबड को बत्तीस लाख सुवर्ण मुद्रा का व्यय हुआ था। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्र सूरीश्वरजी से उन्होंने प्रतिष्ठा कराई और राजा कुमारपाल से आरती उतराई थी।

यहाँ कोई सैंधवा नामकी देवी के उपद्रव को श्री हेमचन्द्रसूरिजी ने उपशांत किया था।

शकुनिका विहार के लिए सुवर्ण के पच्चीस ध्वजदंड श्री तेजपाल ने करवाये थे और वस्तुपाल ने सरस्वती भंडार ज्ञानकोष की स्थापना की थी।

वाघेला वंश के अंतिम राजा कर्णदेव के शासनकाल तक तो जैन संस्कृति की श्री शोभा के सजग प्रहरी जैसे यह शकुनिका विहार महा जिनालय ने अपना अस्तित्व और आकर्षण संसार भर में जमा

रखा था। उसके बाद भारतवर्ष में मुस्लिम बादशाहत का सूत्रपात हुआ और देखते ही देखते उस का अभ्युदय मध्याकाश तक पहुंच गया।

सं. १३७७ में गयासुद्दीन तुगलक ने शकुनिका विहार जिन मन्दिर को मस्जिद में बदल डाला। यह वर्णन 'हमीर मदमर्दन' काव्य में भी मिलता है।

शकुनिका विहार के उत्तरीय घुम्मट के नीचे हिजरी ७२१ (सं. १३७७) का एक शिलालेख है। उस में गयासुद्दीन तुगलक द्वारा इस जिन मन्दिर का मस्जिद में परिवर्तन करने का उल्लेख है। भरूच की जुमा मस्जिद भी जैन मन्दिर को ही बदल कर बनवाई गयी है। उस के बारे में डा० फ्राउभ ने लिखा है कि--

'सुन्दर ग्रीधर स्तंभ, आबू जैसी शैलीवाले कलात्मक कीर्तिमुख, देव-देवियों की पंक्ति, शृंगार से सुसज्ज विशाल मंडप और मंगल मूर्तियाँ आदि तोड़ घिसकर आकृति के नाश के घोर प्रयत्नों के बावजूद जैन मन्दिर के समृद्ध शिल्प-स्थापत्य से आज भी जुमा मस्जिद भरपूर है।'

डो बर्जेस ने इसी बारे में लिखा है कि इस्वी सन् १२९७ में अलाउद्दीन खिलजी ने गुजरात पर फतह हासिल की और भरूच मुस्लिमों के हाथ में चला गया। उसने गुजरात में कई जगह जैन एवं हिन्दू मन्दिरों को मस्जिद में बदल डाला। उसी वक्त भरूच का विराट जैन मन्दिर जुमा मस्जिद के रूप में तब्दील हुआ।

इस से यह भी फलित होता है कि शकुनिका विहार के अतिरिक्त दूसरे देरासरों की भी मस्जिदें बनाई गईं।

इस तरह मुनिसुव्रत स्वामी भगवान के समय का अश्वावबोध तीर्थ-राजकुमारी सुदर्शना का शकुनिका विहार, उदायन मंत्री के पुत्र

दंडनायक अंबड द्वारा उद्धृत कलामय तोरणस्तम्भ से युक्त शकुनिका विहार जहां सुवर्ण के ध्वज दंड कलश अपार शोभा फैलाते थे और अद्‌भुत वातावरण उत्पन्न करते थे, कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचंद्राचार्य महाराज ने जिसकी प्रतिष्ठा की थी जो सारे संसार में प्रशंसा पाया था वह शकुनिका विहार महाप्रासाद आज मस्जिद के रूप में भरूच में विद्यमान है। यह भी विधि की विडम्बना, प्रवल नियति और प्रचंड भवितव्यता का ही प्रमाण है!

इस मस्जिद को राष्ट्रीय सम्पत्ति घोषित करता पुरातत्व विभाग का बोर्ड दाहिने हाथ की तरफ लगा हुआ है। उसमें लिखा हुआ है कि 'शकुनिका विहार जैन मन्दिर' जिसे सन् १३२१ में गयासुद्दीन तुगलक ने मस्जिद बना डाला।

आलीशान थंभोंवाली इस इमारत में उत्तम कलाकृतियां आज भी विद्यमान हैं। मनुष्य, यक्ष, देव-देवियां, द्वारपाल तथा भगवान वीतराग देव की कितनी ही मूर्तियां आकृतियों को तोड़ा या घिसा गया है फिर भी जो कुछ है साफ जाहिर हैं। निज मन्दिर के तीनों गंभारे में संगमरमर की तख्तियां सामने दिखाई पड़े यों प्रभुजी की जगह पर लगाई गयी हैं जिन में कुरान की आयतें लिखी हुई हैं।

उत्तर की ओर से रंगमंडप में आने का द्वार श्वेत पाषाण का और कलामय है। द्वारपाल यक्ष आज भी दंड लेकर खड़े हैं।

(क्या मन्दिरों में से बनी मस्जिदें जो अपना साफ-साफ हाल आज भी बताती हैं और इस्लामी उसूलों के खिलाफ आज भी उन में बुतखाना (मूर्ति-आकृति वाला स्थान) नजर आता है वापस मन्दिर नहीं बन सकतीं? जो हक़ीकत में मस्जिद की बजाय मंदिर ज्यादा दीखती हैं।)

जैनों की धर्मनिष्ठा, कलाप्रियता, संस्कार समृद्धि और प्रभुभक्ति की प्रतीति जैन स्थापत्य में आज भी झलक रही है।

भारत में से यदि जैन कला को अलग कर लिया जाय तो कला की दुनिया में देश दरिद्रो मालूम होगा।

वीतराग देव के मन्दिर स्वस्थ, स्वच्छ और प्रभावशाली होते हैं। वहां जाते ही वातावरण और भावनाएं बदल जाती हैं। एक उत्तम विचार एक शुभ भावना भी बड़ा कल्याणकारी फल ला सकती है। जीवन में कोई आध्यात्म का बड़ा कदम न भी उठा सकने वाला जीव यदि प्रभुभक्ति और वीतराग भाव में थोड़ी देर पल दो पल भी लीन हुआ तो उसका कल्याण मार्ग प्रशस्त हो सकता है। ऐसी कामना से प्रेरित हो हमने सुगृहितनामधेय आचार्य प्रवर श्रीमद् विजय देवेंद्र सूरीश्वरजी महाराज साहब द्वारा निर्मित सुदंसणाचरियं नाम के मागधी मूल ग्रंथ के आधार पर प्रस्तुत पुस्तक हिंदुस्तानी भाषा में लिखी है। इस से पूर्व सं २०२४ मे हिंदी में,२०२३ में संस्कृत में व २०२७ में गुजराती भाषा में सुदर्शना लिखी है तथा मूल मागधी चरित्र भी अप्राप्य होने के कारण उसे भी २०२८ में प्रकाशित किया है। सुदर्शना की कथा बहुत प्रेरक और उपकारक तथा शकुनिका विहार का सिलसिलेवार आजतक का इतिहास इस में सुरक्षित होने के कारण सुदर्शना की इस कथा को अनेक भाषा में लिखवाना व छपवाना चाहिये।

वाचकगण इसे भाव की गहराई से पढ़ें।

जिन भक्ति और विरति की आराधना में उजमाल बनें।

आषाढ़ सुदि १०-२०३६ आचार्य-विशाल सेनसूरि

दो शब्द

भारतीय संस्कृति के पोषण में जैन-साहित्य, जैन-दर्शन व जैन-कला का प्रमुख स्थान है। हजारों वर्षों पूर्व के जैन-कला के प्रतीक चाहे आज खंडहर ही गिने जाते हों पर उनका अपना विशिष्ट स्थान है। वे आज भी इस देश की महान् धरोहर हैं। इसी तरह जैन-दर्शन भी अनेक झंझावतों के बीच पसार होता हुआ आज भी अन्य दर्शनों में प्रमुख ही नहीं जन-जन के लिये प्रेरक भी है। जैन साहित्य की गरिमा तो अनोखी ही है—कौनसा विषय ऐसा है जिस पर जैन आचार्यों की कलम न चली हो और कालातीत में हजारों ग्रंथों के जलाये जाने के बाद भी जो बचा है वह भी इतना काफी है कि आज उसे भी भारतीय साहित्य से अलग करदें तो ऐसी रिक्तता आयेगी जो हरेक प्रबुद्ध व्यक्ति को अखरे बगैर रहेगी नहीं। जैनाचार्यों ने जहां गूढ़ विषयों को सरल बनाकर जन मानस तक पहुंचाया है, वहाँ चरित्र इतिहास और कथाओं के माध्यम से इतना लिखा है कि यदि आज उसका आज की भाषा में ठीक व्यवस्थित ढंग से प्रचार प्रसार हो सके तो आज के भावुक व भौतिकता पूर्ण वातावरण में ऐसा मसाला मिल जावे कि वह ज्ञान वर्धक तो हो ही पर साहित्य के नाम पर विनाश के कगार पर जाने वाले युवक व विद्यार्थी वर्ग को कु-साहित्य से भी बचा पावे। आज के लोगों का नॉवल-उपन्यासों के प्रति रुझान बढ़ रहा है उसके लिये केवल पाठकों को दोष देने से काम चलेगा क्या? जब तक रुची के अनुकूल सत्साहित्य के निमार्ण की तरफ हमारे साधु मुनिराजों का ध्यान नहीं जावेगा तब तक बीमारी का सही निदान नहीं हो पावेगा।

हमें प्रसन्नता है कि हमारे समाज के प्रबुद्ध वर्ग ने इस स्थिति को जाना है और माना है। यहां एक इसी तरह की कथा को आज की भाषा में जैन शासन के एक दूरदर्शी आचार्य भगवंत जन कल्याण की भावना से प्रस्तुत कर रहे हैं। आज से करीब १५ वर्ष पूर्व सर्व प्रथम जयपुर शहर में इस कथा का वाचन व्याख्यान में मुनिप्रवर श्री विशाल विजय जी म. सा. ने रोचक ढंग से किया था। बड़ी पसंद पड़ी 'सुदर्शना' की यह कहानी और श्रोता इतने मंत्र मुग्ध हुये कि मुनिप्रवर को अर्ज किया इस कथा को हिन्दी भाषा में छपवाने के लिये। मुनिप्रवर ने काफी महनत से इस कथा को लिखा और 'सुदर्शना' प्रकाशित होगई जयपुर से। वस्तुतः जहां वह, यादगारी चातुर्मास रहा वहां मुनिप्रवर की प्रतिभा को चार चांद लगाने वाला भी बना। जन्मतः गुजराती भाषी, हिन्दी भाषा में कुछ लिखें और वह इतना लोकप्रिय बने यह अनूठी चीज थी। सुदर्शना के माध्यम से लोगों ने कथा जानी, इतिहास जाना—तीर्थ भूमि को पहचाना।

तब के सामान्य मुनि आज जैन शासन के प्रभावी आचार्य हैं, और अब 'सुदर्शना' भी पुनः अपने विकसित रूप में उन्हीं की कलम से आपके लिये आरही है। सारे देश का परिभ्रमण कर जन-जन की धार्मिक चेतना को जागृत कर अनेक ग्रंथों का लेखन व सम्पादन कर पुनः इस ग्रंथ के लेखन से सहज ही लेखक की प्रतिभा का बोध हो जाता है। लेखन शैली लाक्षणिक है, हृदय को छूने वाली है। यह केवल कथा ही नहीं पर उसके माध्यम से जो बोध तत्व इस पुस्तक में दिया जारहा है वह अति महत्वपूर्ण है। गुजराती और हिन्दी के साथ अनेक स्थानों पर पुरानी शाही नजाकती उर्दू भाषा के रूप में रोचकता का अनोखा संगम आपको इसमें मिलेगा। जो रस आज की नवल कथाओं में जागृत होता है लेखक महोदय ने इस पुस्तक को उसी स्टाइल पर लिखा है। एक दफा हाथ में लिये बाद छोड़ने का मन नहीं चाहता।

आचार्य भगवन्त ने हिन्दी भाषी प्रदेश से बाहर रहकर भी हिन्दी साहित्य के प्रति जो निष्ठा जाहिर की है हिन्दी भाषा और उसके पाठकों के लिये गौरव रूप है। इस बात की और भी प्रसन्नता है कि राजस्थान प्रदेश पर जो उनका उपकार रहा है राजस्थान में हो रहे इस प्रकाशन के माध्यम से उस में एक कड़ी और जुड़ी है।

यह पुस्तक हरेक व्यक्ति के लिये पठनीय है, संगृहणीय है केवल इसलिये नहीं कि इसमें एक सुन्दर पौराणिक कथा लालित्य पूर्ण भाषा में लिखी गई है, बल्कि इसलिये कि कथा के साथ जो मधुर उपदेशात्मक वाक्य जोड़े गये हैं वे आत्म विकास के लिये महान् उपयोगी हैं। सारी पुस्तक में से बानगी रूप कुछ उद्धरण यहां अंकित कर रहे हैं जो अत्यधिक प्रेरणादायी हैं।

"कोई यदि मनुष्य को रोया तो कुछ रोया, मनुष्य के गुण को कोई रोया तो बहुत कुछ रोया मगर आदमी मतलब को ही रोया तो क्या खाक रोया।" (पृष्ठ २)

"कोई आता ही जाने के लिये है। मेले लगते ही बिछड़ने के लिये हैं। किसी का जाना क्या है? वह तो हमें आगाह करता है कि जब उठती जवानी उड़ गई तो हम कहां तक बच सकते हैं? किन्तु इस संसार की सब से बड़ी धोखेबाजी यही है कि मनुष्य अपनी मौत के बिना सारी बातों को बड़ी गहराई से सोचता है और धोखा खा जाता है।" (पृष्ठ ४)

"जीव समझदारी भरे प्रयत्न करे तो सब कुछ संभव है और धर्म तो बहुत सरलता से बन पाने वाली चीज है। अपने स्वार्थ, शरीर, परिवार के लिये जीव कितना कितना करता है? अपने स्वंय की आत्मा के लिये उसे कुछ करना ही चाहिये। सब का काम करने वाला अपना ही कार्य चुक जायगा तो कितना बुरा होगा" (पृष्ठ २४)

"सारे संसार का तंत्र कर्माधीन है। कर्मानुसार फल मिलता है। प्रकृति की निर्बल से निर्बल पल में भी कभी कभी निरपराधी को दण्ड नहीं मिलता। यह एक व्यवस्थित तंत्र है, इसमें किसी का हस्तक्षेप नहीं चल सकता। स्वयं के ही प्रयत्न यहां कारगर होते हैं। स्वयं के सत्पुरुषार्थ से ही कर्म बांधे या छोड़े जाते हैं।" (पृष्ठ ६३)

"याद रखो! एक बार धर्म किया तो आत्मा दुबारा उसे शीघ्र ही स्वीकार करने को राजी हो जाती है क्योंकि धर्म आत्मा का अपना जीवन है और फिर चाहे तो तुम धर्म को छोड़ दो किन्तु धर्म तुम्हें नहीं छोड़ेगा। कहीं भी आकर सम्हालेगा क्योंकि तुमने धर्म किया था।" (पृष्ठ १०८)

"ये जन्म मरण का विषचक्र ये भव की शृंखला से बाहर निकलने का ही अपना लक्ष्य होना चाहिये। इस ध्येय को कभी भी धुंधला नहीं होने देना चाहिये। यदि इसमें सफलता मिल जावे तो आत्म विकास में कोई बाधा नहीं आती" (पृष्ठ १११)

"दुःख से वेदना, वेदना से खेद, खेद से यदि सद्विचार उत्पन्न हों तो वैराग्य, वैराग्य से सद्बोध, सद्बोधन से विवेक और विवेक से धर्म की प्राप्ति होती है। यदि खेद से दुर्ध्यान हुआ तो दुःख की गली से निकलना अत्यन्त कठिन हो जाता है।" (पृष्ठ १३६)

ये तो बानगियां है सैम्पल हैं। पूरा आनन्द तो पेट भर खाया जाय जब ही प्राप्त होता है। 'सुदर्शना' को माध्यम बना कर आचार्य भगवंत सचोट भाषा में जागृत कर रहे हैं हम संसार में रचे पचे जीवों को। उनका तो जीवन ही उपकार के लिये है। इस कथा में पूर्व भव में तिर्यंच के जीव को अनायास प्राप्त हुई नमस्कार मंत्र की साधना ने कहां से कहां पहुंचा दिया। हम तो मानव हैं जन्म से नमस्कार महा-मंत्री के आराधक हैं फिर भी महामंत्र के प्रभाव से पूर्ण भिज्ञ नहीं ?

यह प्रश्न सोचनीय है मननीय है। अवश्य ही यह कहानी केवल कहानी न रह कर आत्मा को जागृत कर वास्तविक रूप को प्रकट कराने उसका भान कराने में सहायभूत बनेगी।

सुदर्शना के अन्तिम समय के चिन्तन के भाव पर आचार्य भगवंत ने जो कलम चलाई है वह तो गजब की अध्यात्म भावना का दिग्दर्शन है। सारी पुस्तक में से यदि पाठक केवल यह प्रकरण चित्त की शान्ति और समाधि से एक बार भी पढले तो जीवन बदले बगैर रहे नहीं।

आचार्य भगवंत के जयपुर में तीन चातुर्मास सम्पन्न हुये हैं एक से एक बढ़कर उन्हीं की वाणी, उन्हीं की प्रेरणा जयपुर का संघ भाग्यशाली बना श्री जयवर्द्धन पार्श्वनाथ की अनूठी व शालीन प्रतिष्ठा द्वारा। जयपुर का संघ भाग्यशाली बना आपकी प्रेरणा से सारे भारत के तीर्थ धामों की यात्रार्थ एक नहीं दो नहीं छः छः संघ निकाल कर। आत्मीयता का यह लगाव स्थाई बन रहा है नये रूप में सजधज के साथ सुदर्शना के भव्य ग्रंथ का पुनः जयपुर से मुद्रण होने पर।

इस ग्रंथ के सम्पादन हेतु आचार्य भगवंत का आदेश हुआ। पूर्ण सावधानी रखते हुये भी त्रुटियां रहना सम्भव है। उसके लिये क्षमा प्रार्थी हूं।

आचार्य भगवंत की ओज पूर्ण लेखनी से हिन्दी साहित्य समृद्ध होता रहे यही मगंल कामना।

जयपुर (राज०) हीराचन्द बैद

———

प्रकाशकीय निवेदन

पूज्यपाद आचार्य देव श्रीमद् विजय विशालसेन सूरीश्वर जी (श्री विराट) महाराज साहब ने काफी कुछ पुस्तकें लिखी हैं। हिन्दी-भाषा पर आपका प्रभुत्व विस्मयकारी है।

मद्रास, बैंगलोर में सुदसणाचारिय पर दिये आप श्री के प्रवचनों को जनता ने मुग्ध हो श्रवण किया और इस चरित्र को हिंदी में छपवाने की विनती की। इससे पूर्व भी एक संक्षिप्त आवृत्ति हिन्दी, गुजराती एंव संस्कृत में भी पूज्य श्री ने लिखी तथा प्राकृत में सम्पादित भी की है। पूज्य श्री ने इस आवृत्ति को अति व्यस्तता में भी थोड़ा थोड़ा समय निकाल कर शुरू से लिखा और जयपुर के जौहरी हीराचंदजी वैद को सौंप दिया। तथा उन्हीं पर संशोधन कार्य, छपाई आदि की पंसदगी भी छोड़ी।

श्री हीराचन्दजी वैद तन-मन धन से अपनी विलक्षण सूझ-बूझ से सदैव धर्म शासन समाज-सेवा में रत हैं। श्री हीराचंदजी वैद पू० आ० श्री जी के अनन्य भक्तों में हैं ही लेकिन इन्हें जैनों के सभी आचार्य भगवंत एंव प्रमुख मुनिराज जानते हैं और शासन सेवा का कार्य भार देते रहते हैं यथा जीर्णोद्धार का, एवं पुस्तक प्रकाशन का, शिविर संचालन का, मूर्ति निर्माण आदि का, एवं चित्रण का जिन्हें श्री वैदजी बखूबी निभाते हैं। अनेक धार्मिक शैक्षणिक व सामाजिक संस्थाओं का संचालन इनके द्वारा होता है। आनन्दजी कल्याणजी की पेढी के प्रादेशिक प्रतिनिधि है तथा पेढी के काम में दत्तचित रहते हैं। जयपुर संघ के गौरव

पूर्ण वर्तमान इतिहास में आपका अनुमोदनीय अनुदान एवं नेतृत्व रहा है। आप द्वारा की गई विनती आदि को पू० आचार्य आदि मुनिराज आज भी गंभीरता से सुनते हैं। आपका सभी प्रमुख गुरुमहाराजों से अच्छा संपर्क है। पूज्य श्री को आचार्य पद प्रदान महोत्सव पर आचार्य पद की कंबली (शाल) ओढ़ाने का लाभ भी बम्बई के वर्तमान अतीत में सर्वाधिक सद्व्यय कर आपने लिया था। जयपुर में आचार्य भगवंत के तीन तीन चतुर्मास कराने में इनकी प्रेरणा ही प्रमुख रही है। आचार्यभगवंत की प्रेरणा से जयपुर से सारे भारत के तीर्थ स्थलों के निकले ६-६ संघों एवं भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव पर जयपुर के श्वेताम्बर देरासर में भगवान के जीवन दर्शन के भव्य भित्ति चित्रों के कार्य का संयोजन भी इनके हाथों हुआ है।

जौहरी हीराचंदजी बैद ने ही इस पुस्तक को सजाने संवारने से लेकर प्रेस सबंधी सारा कार्य भार सम्हाला है। एतदर्थ हम आपके बहुत आभारी हैं। भविष्य में भी आपका सहयोग सदा मिलता रहेगा, यह हमें विश्वास है। पाठक इस पुस्तक को पढ़ेंगे और एक अदभुत धर्मकथा का स्वाद पायेंगे। पूज्य श्री से पुनः विनती करते हैं कि ऐसी पुस्तकें आप सदा लिखा करें और हम बाल जीवों पर आप का उपकार होता रहे।

दिनांक
रक्षा बन्धन २०३७

भवदीय
विराट-प्रकाशन
बम्बई

सुदर्शना के तृतीय प्रकाशन में
● सहयोगी दाता

पुस्तकें	दाता	
१००	श्रीमती देवीबाई हीराचंद जी, मुन्डारा (राज.) हाल. कोलाबा (हीराचंद जी एवं उनकी धर्म पत्नी देवीबाई के चतुर्थ व्रत के उपलक्ष में हस्ते भभूतमल भेरूलाल एवं डा० रमेशकुमार)	
२५	श्रीमती चन्द्रावदन भँवरलालजी धूपिया	कलकत्ता
२५	मे. हस्तीमल एण्ड कं० (देवीचन्द्र मिश्रीमल एण्ड कं०)	मद्रास
२५	शाह हस्तीमलजी रंगराजजी	"
२५	शाह कुन्दनमलजी तलाजी	मांडवला (राज.)
१५	मे. जे. के. ट्रेडर्स	बैंगलोर
११	मे. के. श्रेल मेटल डिस्ट्रीब्यूटर्स	मद्रास
११	मे. विमल एन्टरप्राईज	बैंगलोर
११	शाह दीपचंदजी चन्दनमलजी	"
११	मे. प्रकाश ट्रेडिंग कार्पोरेशन	"
११	मे. महावीर ट्रेडर्स हः राजेन्द्रकुमार	"
११	शा. मगनाजी मिश्रीमलजी	"

११	शा. पारसमलजी चन्दनमलजी एण्ड सन्स	बैंगलोर
११	शा. मिश्रीमलजी नवरत्नमलजी	"
११	शा. सागरमलजी सुखराजजी एण्ड कं०	"
११	शा. शेषमलजी वनराजजी	"
११	मे. मेहता केमिकल्स्	"
११	शा. मिश्रीमलजी सुराणा	"
११	मे. मधु क्लॉथ सेन्टर	"
११	मे. दूधमल एण्ड ब्रदर्स	"
११	मे. पारस लाईट हाउस	"
११	शा. दलीचंदजी मीठालालजी	"
११	शा. जीवराजजी बाबुलालजी	"
११	शा. वस्तुपाल खुमाली	"
११	मे. साउथ इन्डिया केमिकल्स्	"
११	शा. देशमल घेवरचंदजी	"
११	शा. चंपालालजी चंदुलालजी	"
११	शा. अमरतलालजी नरपतराजजी	"
११	शा. प्रकाशचंदजी प्रेमराजजी	"
११	मे. मफतलाल एण्ड ब्रदर्स	"
११	मे. कांतिलाल एण्ड ब्रदर्स	"
११	शा. खीमचंद जयन्तिलाल	"
११	मे. महालक्ष्मी स्टील कारपोरेशन	"
११	श्री वृद्धसिहजी हीराचंदजी वैद	जयपुर
११	शा. प्रतापमलजी अमोलखचंदजी	विजयवाड़ा

११	शा. सांकलाजी अचलदासजी ह. बॉम्बे ज्वेलरी मार्ट	विजय
११	शा. हीराजी चंदनमलजी	वाड़ा
११	मे. शांतिलाल एण्ड कं०	,,
११	शा. प्रतापचंदजी वसंतकुमार ह. छगनलालजी	,,
११	मे. महावीर ट्रान्सपोर्ट कं० ह: मफतलालजी	,,
११	शा. गजराजजी जुहारमलजी ह. गजराज एण्ड कं०	,,
११	शा समरथमलजी अशोककुमार	पाडीव (राज.)
११	मे. फूलचंदजी विजयराजजी एण्ड कं०	विजयवाड़ा
११	मे. जैन मेटल रोलिंग मिल्स्	मद्रास
११	मे. बॉम्बे स्टील हाउस	,,
११	मे. राजस्थान मेटल हाउस	,,
११	मे. रांका मेटल कॉरपोरेशन	,,
११	शा. मिश्रीमलजी नवाजी ह. लालचंदजी	,,
११	शा. जेठमलजी गेनमलजी ह. पुखराजजी	,,
११	माणेकचंदजी करणावट	अजमेर
११	पोपटलाल मोतीलाल पटवा	अहमदनगर
११	मदनसिंहजी भागचंदजी पीपाडा	ब्यावर
११	श्रीमती संपतबहेन छगनलालजी भंडारी	,,
११	मे. विजय मेटल कारपोरेशन ह. मणीभाई ऐफ शाह	बैंगलोर
११	शाह कुन्दनमल कुशलराजजी	,,
११	मे. जे. के. फार्मा. ह. जेठमलजी	,,
११	घेवरचंदजी कांतिलालजी ह. ऐम शांतिलाल एण्ड कं०	,,

११	मे. हेमंत ट्रेडिंग कं० ह: लक्ष्मीचंदजी	बैंगलोर
११	मे. चंदन स्टील हाउस ह: बाबुलालजी	”
११	बी. जवरचंदजी पगारिया	”
११	मे. राजेश एण्ड कं०	”
११	गौतमचंदजी बी. मुराणा	”
११	मे. अरुण सिल्क ह: भंवरलालजी	”
११	मे. जैन टेक्सटाईल ह: चंपालालजी	”
११	मे. एस. कपूरचंद एण्ड कं० ह: कपूरचंदजी	”
११	मे. सुरेश टेक्सटाईल्स ह: वस्तीमलजी भरलेया	”
११	मे. रमेश एण्ड कं० ह: वीरचंदजी	”
११	मे. शा. महावीरचंद उत्तमचंद एण्ड कं०	”
११	मे. स्वस्तिक दाल मिल, ह: मांगीलालजी	गुंटुर
११	लक्ष्मी दाल मिल ह: हेमराजजी	”
११	मे. नेनमल जीवराजजी एण्ड कं०	”
११	शा. सोहनमलजी नगाजी	”
११	शा. वेलचंदजी जयंतिलाल	”
११	शा. उमेदमलजी भभूतमलजी	”
११	मे. प्रकाश बुक मेन्युफेकचर्स	हुबली
११	शा. हरखचंद पारसमल एण्ड कं०	”
११	शा. हरखचंदजी फतेहचंदजी	जयपुर
११	त्रिलोकचंद देवीचंद शेठ	जालना
११	तरसेमकुमार बाबूलालजी जैन	जयपुर
११	भँवरलालजी हीराणी	मद्रास

११	शा. पर्जीगजी वाबुलाल	मद्रास
११	श्रेस. देवराजजी जैन	"
११	श्रेस. जावंतराजजी जैन	"
११	मे. मेजर पेन एण्ड कं०	"
११	शा कुन्दनमलजी मिश्रीमलजी	"
११	शा. केशरीमलजी धनराजजी	"
११	मे मूलतानमल एण्ड कं०	"
११	मे. नीला इन्डस्ट्रीज	"
११	शा. हिन्दुजी तलकाजी हः छोगमलजी	"
११	मे. रमेश मेडीकल हॉल	"
११	शा. दलीचंदजी हीराचंदजी भंडारी	"
११	मे. अशोक साड़ी सेन्टर हः छगनराजजी	"
११	शा. मोतीलालजी नथमलजी	"
११	शा. केवलचंदजी धरमीचंदजी खटोड	"
११	शा. पूनमचंदजी मांगीलालजी कटारिया	"
११	शा श्रेम. मिलापचंदजी नाहर	"
१०	शा. तगराजी जेठमलजी हिराणी	बैंगलोर
१०	शा. पुखराजजी मांगीलालजी	"
१०	शा. लालचंदजी जीवराजजी	"
१०	मे. चंपालाल एण्ड कं०	"
१०	शा रेखचंदजी गुलेच्छा	कडलोर
	सा. श्री कुसुमश्रीजी के उपदेश में	
१०	मे. बांठिया कटपीस सेन्टर	बैंगलोर

१०	शा. राजमलजी जैन	बैंगलोर
५	शा. मनुभाई	"
५	शा. नेमीचंदजी मोहनलालजी वोरा	"
५	शा. रिखवचंदजी दानाजी	"
५	शा. हिराचंदजी जवानमलजी	"
५	शा. मीठालालजी मदनलालजी	"
५	मे. पारसमलजी प्रकाशराज एण्ड कं०	"
५	शा. चंपालालजी भंवरलालजी	गुंटुर
५	शा. नेमीचंदजी कोठारी	बैंगलौर
५	मे. भारत मोटर स्टोर्स	"
५	शा. वावुभाई वीरचंद भाई	"
५	मे. हिन्दुस्तान ड्रग हाउस	"
५	श्री श्राविका संघ चीकपेठ	"
५	श्रेस. श्रोटरमलजी भणसाली	"
५	मे. मदनलालजी रमेशकुमार एण्ड कं०	"
५	मे. मनोजकुमार	"
५	शा. शेरमलजी शिवराजजी	"
५	शा. शुकनराजजी लूणिया	"
५	मे. वसंत फेन्सी स्टोर्स	"
५	मे. गणेशमलजी जुगराजजी	"
५	श्री फूलचंदजी पुखराजजी सांड	"
५	मे. श्रार. नागरदास	"

१

दुनिया की दौलत से आत्मा का वैभव अनंत गुना उमदा और कीमती है।

शरीर की, बुद्धि की, खजाने की, सेना की एवं अधिकार की सम्पत्ति के सामने आत्मा की संपत्ति जीतती है और मनुष्य उसीसे विजेता बन जाता है। सदा के लिए विजयी बन जाता है। हां, राग-द्वेष का जेता विजेता-विजयी जिन, जिनेश्वर।

गुण ही आत्मा की समृद्धि है, जो आत्मा में विपुल मात्रा में भरी पड़ी है, कहीं से लानी पानी नहीं—प्रकट करनी है—जो दबी पड़ी है।

संसार में कोई अच्छा नहीं, कोई बुरा नहीं, लेकिन गुणवान को लोग अच्छा और गुणहीन या अवगुणी को बुरा कहते हैं।

गुण से यह जीव महान् और सुयोग्य बनता है। सुयोग्य को सब सुख सम्पत्ति व सफलता मिलती है—अपने ही नहीं पराये भी उसे चाहते हैं, आदर देते व इज्जत से देखते हैं।

धन्या श्रेष्ठि कन्या थी। जैसी रूपवती वैसी ही गुणवती सुशील और कलावती भी।

हिरण्यपुर के नर-नारी आज उसे आंसू के अर्घ्य दे रहे थे।

उसकी सूझ-बूझ व गुणों को याद कर वे गद्गद् हो रो उठते थे ।

धन्या सच ही धन्य हो गई थी । छोटी होते हुए भी कितनी प्रौढ थी वह ?

जब देखो तब ओठों पर मुस्कान, खुश खुशाल, सदावहार चेहरा । कभी चिढ़ नहीं उदासी भी नहीं । बातें भी हिम्मत की– त्याग की, बलिदान की, तत्व की, तथ्य की, परमार्थ की । इतनी सी उम्र में कितनी समझदारी पायी थी उसने ?

माता-पिता की इकलौती बेटी, भाई की एकमात्र बहन धन्या । कितनी प्यारी कितनी दुलारी निखरती जवानी में भी बालक की तरह भोली और सरल-सालस । खूबसूरत मगर ओछी नहीं, नगरसेठ की बेटी किंतु जरासा भी अभिमान नहीं । घर पर कोई भी आवे तो वह कितना आव आदर देवे और उदास को भी हँसा दे । दयालू भी, उदार भी । अकारण ही वात्सल्य उपजाने वाली धन्या छोटीसी बीमारी भुगत अचानक ही चल बसी और पत्थर के दिल भी दहल उठे ।

परिवार को बिलखता छोड़ वह कली मुरझा गई । घर में ही नहीं सारे नगर में शोक की घटा छा गई, जैसे कोई सुंदर बगिया में हिमपात हुआ हो ।

जहां देखो वहां लोग धन्या की गुणगरिमा, विलक्षणता की ही बातें करते आंखें गीली करते थे ।

अपार विविधता और विचित्रता से भरे इस संसार में निरंतर घटना-दुर्घटना घटती ही रहती है और प्राणियों पर निश्चित रूप से उसका प्रभाव पड़ता रहता है और आनन्द या उद्वेग, हास्य या रुदन सुख या दुःख, प्रिय या अप्रिय नृत्य या पछाड़ के रूप में जीव उसे अनुभव करता है ।

किसीको बहुमूल्य शृंगार से सजाया जा रहा है तो किसी की

अर्थी बांधी जा रही है। जहां हर पल रंग बदलते रहते हैं यह वह दुनिया है, जिसमें रंग जमाने की कोशिश में हम जीते हैं और आखिर रंग ही नहीं उड़ जाता हम ही उड़ जाते हैं। जब हम उड़ गये तो हमारे पास बचा ही क्या ?

अपनी प्यारी बहन धन्या के अकाल अवसान से धनपाल को घोर आघात लगा था। बहन का शुद्ध वात्सल्य, मधुरभाषा, उदात्त सरल व्यवहार, तथा सौम्यता गंभीरता, मृदुता आदि गुणों को याद कर वह बच्चों की तरह रो उठता था।

कोई यदि मनुष्य को रोया तो कुछ रोया, मनुष्य के गुण को कोई रोया बहुत कुछ रोया मगर आदमी मतलब को ही रोया तो क्या खाक रोया ?

हां, हां, सारी दुनिया रोती है, स्वयं का थोड़ा भी कुछ मरता है तो तुरन्त रोना आता है। आत्मा को कौन रोता है ? जिसे आत्मा की खबर है उसे न तकलीफ है न रोना।

रोग से पीड़ित धन्या मृत्यु शय्या में भी स्वस्थ व शांत थी। वह स्वयं दूसरों को हिम्मत बंधाती और कहती आप धैर्य और साहस रखिये; मुझे पहले से काफी अच्छा है। नाहक चिंता क्यों करते हैं। भगवान् अरिहंत को याद करो, नवकार महामंत्र का स्मरण करो, धर्म के प्रताप से सदा शुभ और आनन्द मंगल होता है।

स्वयं धन्या के पिता वर्द्धमान सेठ एवं माता धनवती इन बातों को याद कर आंखें भर लेते और कहते कि 'हमारी बेटी तो देवी थी किंतु हमें भी ठगकर चली गई।' सच है कि अच्छे लोग जल्दी ही चल देते हैं। यों ये प्रौढ दम्पती भी सप्ताहों तक बेटी की याद में विलखते रहे। किंतु आखिर गुरुओं की वाणी कि "कोई आता ही जाने के लिए है। मेले लगते ही बिछुड़ने के लिए हैं। किसीका जाना क्या है ?

वह तो हमें आगाह करता है कि जब उठती जवानी उड़ गई तो हम कहां तक बच सकते हैं ? किंतु इस संसार की सबसे बड़ी धोखेबाजी यही है कि यहां मनुष्य अपनी मौत के बिना सारी बातों को बड़ी गहराई से सोचता है और धोखा खा जाता है।" इत्यादि समझ शांत हुए किंतु धनपाल के हाल में कोई फर्क नहीं आया, बिना बहन के घर ही सूना पड़ गया था।

कितनेक व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनके एक के होने से ही घर भरा लगता है, घरमें बीसों व्यक्ति हों और वह एक न हो तो जैसे कोई नहीं है। धन्या के बिना घर शून्य हो गया था। उसकी गहरी असर में धनपाल घुटा जा रहा था। उसके माता-पिता एवं पत्नी धनश्री ने उसे खूब समझाया कि 'जहां अपना कोई उपाय नहीं वहां कहां तक यह सब उचित है ?' धनपाल का शोक तो कम नहीं हुआ किंतु उसका स्वास्थ्य भी ढीला पड़ गया। माता-पिता को और चिंता हुई।

वर्द्धमान सेठ ने धनपाल के मित्र धर्मपाल को बुलाकर कहा कि 'तुम्हारे मित्र के दु:ख का कोई उपाय करो, तुम्हारी बात मानेगा। तुम उसके मित्र ही नहीं कल्याण मित्र भी हो।'

धर्मपाल ने भी धनपाल को कहा 'भाई ! तुम स्वयं समझदार और विवेकी हो जो चीज बड़ी से बड़ी कीमत पर या अति कठोर मेहनत से भी नहीं मिल सकती उसके लिए शोक बेकार है। एक तो बहन खोई अब अपना स्वास्थ्य खोओ, और धर्म भी चूको। पता है न, शोक करने से जीव असाता वेदनीय कर्म का बंध करता है ?'

धनपाल ने कहा, "बन्धु ? मैं खूब जानता हूं पर धन्या को भुला नहीं पा रहा हूं। और देख भय्या, खाने, पीने और खेलने की उम्र में वह कितनी शांत, गंभीर और प्रौढ थी ? सरल और समझदार थी ? सबके साथ उसका व्यवहार कितना नम्र व स्नेहल था ? कितना संतोष ? कैसा विनय ? जैसी कथनी वैसी करनी। न छल न प्रपंच न